सृजनहार की सर्जिकल स्ट्राइक

- ब्र.कु. कुंवर सिंह,दिल्ली

बीमार व्यक्ति को जब चिकित्सक देखता है, डायग्नोज़ करता है, तो उसके आधार से ही उसे दवाई लेने, परहेज करने को कहता है। अगर मरीज उसके कहे अनुसार ना चले तो बीमारी पुनः पुनः उभर कर सामने आती है। जब कभी बीमारी एक बार या दो बार उभरी तो उसे दवाइयों से तो ठीक किया जा सकता है, लेकिन जब वो नासूर बन जाये, जब उसका कोई इलाज न हो तो उसको ऑपरेशन कर, या सर्जरी कर उस अंग के भाग को काटकर निकालना पड़ता है। वो इसलिए कि वो बीमारी दोबारा ना शरीर में फैल जाये।

आज हर मानव मन पूर्णतया बीमार है। बीमार का अर्थ है कन्फ्यूज़्ड है, परेशान है, डिस्टर्ब्ड है। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा। समझ में ना आने के कारण, मन गलतियों पर गलतियाँ करते ही जा रहा है। जब उसे मना किया जाता तो थोड़ी देर के लिए वो मान तो जाता है, लेकिन पुनः पुनः वही गलती करने को आतुर रहता है। कारण साफ है कि आज मन में विचारों का एक जमघट है, जिसमें से हमें समझ नहीं आता कि किस विचार के ऊपर कार्य किया जाए। इतनी नकारात्मक ऊर्जा इसमें भरी हुई है कि कोई भी इसे निकालने में सक्षम नहीं है।

आप सोचें ज़रा! पूरे विश्व में लगभग सात सौ पचास करोड़ आत्माओं के मन के अगर ऐसे ही संकल्प हों तो क्या हाल होगा समाज या विश्व का। ऐसा नहीं है कि लोग अपने मन को ठीक करने के लिए योग, प्राणायाम या नेचरोपैथी या अन्यानेक ध्यान या ज्योतिष, वास्तु, टेलीपैथी का सहारा नहीं ले रहे। सब ले रहे हैं, लेकिन ठीक नहीं हो रहे। ठीक हो भी कैसे सकते हैं, क्योंकि सबके पास मन का अस्थायी इलाज है। स्थायी रूप से कोई भी इलाज करने में सक्षम नहीं है। इसलिए हमारे पास एक ऐसा परम चिकित्सक है, जिसको हम वैद्यनाथ भी कहते हैं। वही हमारा सम्पूर्ण इलाज कर सकता है।

परमात्मा ने जब देखा कि इस धरती पर त्राहि-त्राहि मची हुई है, सभी लोगों के बीच में अफरा-तफरी मची है, सबलोग स्वयं ही हिंसा के शिकार हैं, उस समय उसने कुछ आत्माओं को भेजकर या यों कहें कि उनके द्वारा पूरे मानव मन की सर्जरी करना आरंभ किया। ये सर्जरी किस तरह से होती है, उसके तौर-तरीकों को समझते हैं।

जैसे हम जब किसी डॉक्टर के पास जाते हैं, और डॉक्टर का मूड ठीक ना हो और पेशेन्ट को अपनी सारी बीमारी भी उसे बतानी है तो मरीज को कैसा लगेगा! वो तो नर्वस हो जायेगा। इसलिए ज़्यादातर डॉक्टर्स एक बात की तसल्ली देते हैं सबको कि कोई बड़ा रोग नहीं है, ठीक हो जाएगा। अर्थात् प्यार से मरीज को देखना पड़ता है। तब जाकर मरीज पर असर पड़ता है, दवाइयाँ असर करती हैं। परमचिकित्सक वैद्यनाथ शिव बाबा ने इस दुनिया के एक नरोत्तम को अपना सहयोगी बना उसे सारे गुण इलाज के सिखाये, और उनको नाम दिया प्रजापिता ब्रह्मा। इलाज का पहला नुस्खा बताया कि यदि मानव मन की सर्जरी की शुरुआत करनी है तो उसे प्यार और स्नेह का सबसे पहले एनेस्थीसिया दो, जिससे मरीज अपने आपको पूर्णतया समर्पित कर देगा सर्जरी करवाने के लिए। इसी की तो कमी रही है दुनिया में कि कोई किसी को अपने मन की व्यथा बताने को तैयार नहीं। क्योंकि सभी अहंकार के वश हैं, अपने को सब सही समझते हैं, कोई किसी को सुनने को तैयार नहीं है, किसी के अंदर स्नेह प्यार नहीं बचा।

आज वैद्यनाथ ने प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा लगभग पच्चीस से तीस लाख परिवारों को प्यार और स्नेह देकर उनकी पूर्णतया सर्जरी कर दी है। उनके मन की व्यथा को उनसे अलग कर दिया है। सम्पूर्ण रूप से स्वस्थ मानव का एक मिसाल बन ये सारे परिवार एक सेना के रूप में पूरे विश्व में फैल कर सबके दिल तक पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं। उसे वैद्यनाथ परमात्मा से जोड़ने की कोशिश कर रहे हैं। क्योंकि आप देखो, यदि आपकी सर्जरी हो भी जाए, लेकिन उसे बार-बार डॉक्टर को तब तक दिखाना पड़ता है, जब तक घाव पूरी रीति से भर न जाए। वैसे ही परमात्मा भी सुप्रीम डॉक्टर है, उससे बीच-बीच में बातचीत करके अपनी पारदर्शिता को उसके सामने रखना पड़ता है कि अभी हमारे मन में सिर्फ और सिर्फ आपकी बातें हैं, जो आपने हमें परहेज बताया है व्यर्थ बातों का, नकारात्मकता का, वो सारा हम सम्पूर्ण रीति से पालन कर रहे हैं। यही कार्य हम सुबह-सुबह अमृतवेले या ब्रह्ममुहूर्त में साढ़े तीन से पौने पाँच बजे तक करते हैं, अगर थोड़ा बहुत घाव रह जाता है तो उसका इलाज हमें परमात्मा से उस समय मिल जाता है। तो आओ हम सब भी एक साथ क्यों ना उस परमात्मा के साथ जुड़कर अपनी सर्जरी करवा लें। क्योंकि ये सर्जरी हमको स्वर्गिक सुख देने के काबिल बना देगी। दोबारा कभी भी हम व्यर्थ, नकारात्मक, उलझन, परेशानी, दुःख-तकलीफ के आतंक से आतंकित नहीं रहेंगे। क्योंकि ये सर्जरी हमारा कायाकल्प कर देगी और फिर कभी हमको किसी डॉक्टर और सर्जरी की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

बंधन व उनसे... - पेज 11 का शेष

परेशान न करें-यह है बंधन-मुक्त की निशानी।

पाँचवा बंधन-परिस्थितियों व व्यक्तियों के प्रभाव का बंधन

बड़ा ही जटिल बंधन है यह। परिस्थिति व व्यक्ति हमारी स्थिति को डगमग न करें-यह है बंधन-मुक्त की निशानी। स्व-स्थिति व स्वमान से परिस्थितियों पर विजयी बनें व आत्मिक वृत्ति व मेरे-पन के त्याग से मनुष्यों के प्रभाव को समाप्त करें।

छठा बंधन-प्रकृति का बंधन

पहली प्रकृति है हमारा शरीर। शरीर की व्याधि हमें बंधन न लगे, नीचे न लाए, हमें दुःखी या परेशान न करे, यह है इस बंधन से मुक्ति। व्याधि पुरुषार्थ को रफ्तार दे, इसके लिए व्याधि का चिन्तन न हो, बल्कि स्वचिंतन व ईश्वरीय चिंतन हो। हमारे मुख से यह शब्द न निकले कि मैं बीमार था, इसलिए पुरुषार्थ नहीं कर सका, बल्कि हम कहें कि हमारी व्याधि हमें कर्मातीत स्थिति के समीप ले आई। जैसे ब्रह्मा बाबा ने दिखाया-व्याधियों के समय वे अधिक मग्न थे, व्याधियों के प्रभाव से परे ईश्वरीय नशे में थे।

सातवां बंधन-सेवाओं का

सेवा तो बंधन नहीं है, बंधन मुक्त होने का साधन है। परंतु कभी-कभी हम सेवा को बंधन बना देते हैं। सेवा में रॉयल इच्छाएं हमें बंधन में बांधती हैं। सेवा में स्वार्थ भी बंधन का कारण है। तो हमें याद रहे कि जो सेवा स्थिति को डगमग करे, कर्मातीत होने में विघ्न लगे वह यथार्थ सेवा नहीं। सेवा का बल हमारी स्थिति को आगे बढ़ाता है, हमें आनंदित करता है व मायाजीत बनाता है। तो हम देख लें कि कोई सेवा हमें कर्मातीत बनने में बंधन तो नहीं है। जैसे पिताश्री सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी संभालते हुए भी सदा बंधन मुक्त रहे, वैसे ही सेवा की ज़िम्मेदारी हमें बंधन मुक्त बनाये।

आठवां बंधन-पदार्थों का

पदार्थों की उलझन, उन्हें प्राप्ति की आकांक्षा, पुनः उन्हें उपयोग की उलझन मनुष्य को उलझाये रखती है। परंतु पदार्थ व वैभव हमें बंधन में न बांधें इसके लिए हमें राजा जनक की एक कहानी याद रहे। एक सन्यासी ने राजा जनक से पूछा कि राजन् आप तो महलों में रहते हैं, इतने पदार्थों का उपभोग कर रहे हैं, नाच-गाना, दास-दासी रखते हैं, आप कैसे योगी या विदेही हो सकते हैं? क्या आप इन सबमें लिप्त नहीं हैं? जनक ने उत्तर दिया- महात्मन् ''मैं महलों में रहता हूँ, परंतु महल मुझमें नहीं रहता, मैं वस्तुओं का उपयोग करता हूँ, परंतु वस्तुएं मेरा उपभोग नहीं करती।'' बस यही रहस्य है-अनासक्त होने का।

इस प्रकार स्वयं को हम चेक करें कि कर्मातीत होने में हमारे मार्ग में अब कौन-सा विघ्न है, बंधन है। उन्हें काटकर हम शीघ्र ही मुक्त बनें। इन सभी बंधनों को वैराग्य की तलवार से सहज ही काटा जा सकता है। संपूर्ण विश्व को बंधन-मुक्त बनाने वाले भगवान के बच्चे होकर भी यदि हम बंधन युक्त रहे तो हमें भगवान के बच्चे कौन कहेगा?

बेहद का वैराग्य

जिन्होंने पिताश्री जी को देखा, वे जानते हैं कि प्रारंभ से ही उनका मन पूर्ण विरक्त, वैराग्य से भरपूर था। यह वैराग्य किसी स्थूल घटना पर आधारित नहीं था। इसका आधार ईश्वरीय अनुभव था, यह वैराग्य ज्ञान-युक्त था। इसलिए आदि से अन्त तक उनके वैराग्य में कमी नहीं आई। कोई भी वैभव, प्राप्तियां या सेवा का विस्तार उनके वैराग्य को कम नहीं कर पाया। इसी महान वैराग्य की नींव पर वे महान त्यागी, महान तपस्वी व संपूर्ण बंधन-मुक्त बने।

हमें भी ज्ञान-युक्त होकर बेहद का वैराग्य धारण करना है। वैराग्य मन को स्थिर करता है, वैराग्य उपराम वृत्ति बनाता है, वैराग्य सभी शौक समाप्त कर केवल ईश्वरीय मिलन का शौक उत्पन्न करता है। वैराग्यवान व्यक्ति ही अपने मन, बुद्धि व संस्कारों पर राज्य कर सकता है। अब समय समीप आ रहा है, घर जाने के दिन समीप आ रहे हैं, तो आसक्तियाँ व अनुराग क्यों? अब हमें चाहिए कि मन को पूर्ण विरक्त करें, जहाँ-जहाँ भी यह आसक्त हो, वैराग्य वृत्ति से इसे उपराम करें, तब ही हम समय से पूर्व कर्मातीत हो सकेंगे।

तो आओ... हम सभी ब्रह्मा वत्स अपने माननीय व परम पूज्य पिताश्री जी से प्रेरणा लेकर बेहद का वैराग्य धारण करें, उनके पद-चिन्हों पर चलकर कर्मातीत अवस्था की ओर बढ़ें। पिताश्री जी की भी यही श्रेष्ठ आशा है। उन्हें याद करते हुए हम सच्चे मन से उनकी आशाओं को पूर्ण करने का संकल्प करें। तब ही हम उनके महान व योगी वत्स कहलायेंगे, तब ही हममें, संसार उनका स्वरूप देख सकेगा और लोग मुक्तकंठ से गान करेंगे...

''शिव के रथी तूने जग में कर दिया कमाल''